दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: 19 सितंबर, 2024

दं.वि.वा. 7409/2024

सुदर्शन .....याचिकाकर्ता

द्वारा: सुश्री साक्षी सचदेवा और सुश्री रितिका राजपूत, अधिवक्तागण

बनाम

राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली) और अन्य ...प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री नरेश कुमार चहर, राज्य के लिए अति.लो.अभि., उप.नि. प्रीति सैनी , थाना कंझावला

कोरमः
माननीय न्यायमूर्ति श्री अमित महाजन

अमित महाजन

दं.वि.आ. 28288/2024 (छूट के लिए)

1. सभी न्यायोचित अपवादों के अधीन छूट की अनुमति दी जाती है।

2. आवेदन का निपटान किया जाता है।

<u>दं.वि.वा. 7409/2024 और दं.वि.आ. 28287/2024 (स्थगन के लिए)</u>

3. वर्तमान याचिका दिनांक 11.10.2023 के आदेश (इसके बाद 'आक्षेपित आदेश' कहा जाएगा) को चुनौती देते हुए दायर की गई है, जिसे विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ('ए.एस.जे.'), रोहिणी न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा द्वारा एस.सी. संख्या 144/2022 में पारित किया गया था, जो पुलिस स्टेशन कंझावला में पंजीकृत प्राथमिकी संख्या 18/2022 से उत्पन्न हुआ था।

4. विद्वान अति.स.न्या. ने अपने आदेश में याचिकाकर्ता/आरोपी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 ('दं.प्र.सं.') की धारा 311 के तहत दायर आवेदन को खारिज कर दिया है, जिसमें पीड़िता/अभि.सा.1 को प्रति-परीक्षा के लिए वापस बुलाने की मांग की गई थी और निम्नानुसार उल्लेख किया गया:

> *"अभिलेख के अनुसार, अभि.सा.1/पीड़िता की जांच 07.07.2022 को की गई थी, जब वह केवल 13 वर्ष की थी और उसी दिन विद्वान विधिक सहायता परामर्शदाता द्वारा विधिवत प्रति-परीक्षा किया गया था। वर्तमान आवेदन 05.10.2023 को दायर किया गया है, यानी पीड़िता के जांच करने की तारीख से लगभग 15 महीने बीत जाने के बाद, देरी के लिए कोई औचित्य नहीं है, खासकर तब जब अभियुक्त की ओर से एक निजी अधिवक्ता के पक्ष में वकालतनामा अभिलेख पर है, जिसमें सत्यापन की तिथि 18.08.2022 है और उसी दिन आवेदन न्यायालय में दायर की गई थी।*

XXX XXX XXX

यह भी ध्यान देने योग्य है कि निष्पक्ष विचारण के दौरान अभियुक्त को अपना बचाव करने का अवसर दिया जाना चाहिए, लेकिन जिन मामलों में प्रति-परीक्षा पहले ही हो चुकी है, उनमें पीड़िता को पुनः समन करना कानून के विरुद्ध होगा, खासकर यौन उत्पीड़न के मामलों में, जो कि पॉक्सो अधिनियम की धारा 33 (5) के तहत आता है।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विद्वान कानूनी-सहायता परामर्शदाता द्वारा पीड़िता से प्रति-परीक्षा ठीक से नहीं किया गया, क्योंकि न तो कथित घटना के संबंध में कोई प्रश्न पूछे गए थे और न ही कथित घटना की तारीख और समय के बारे में पीड़िता से कोई प्रश्न पूछे गए थे।

6. राज्य के विद्वान अतिरिक्त लोक अभियोजक ने वर्तमान याचिका का विरोध किया। हालाँकि उन्होंने निष्पक्ष रूप से कहा कि अभियुक्त्री से प्रति-परीक्षा करने का अधिकार उसी दिन समाप्त हो गया था जिस दिन उसका पुनःपरीक्षा की गई थी।

7. दं.प्र.सं. की धारा 311 इस प्रकार है:

"311. महत्वपूर्ण गवाह को समन करना या उपस्थित व्यक्ति की जांच करने की शक्ति।

कोई भी न्यायालय, इस संहिता के अधीन किसी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही के किसी भी चरण में, किसी व्यक्ति को

गवाह के रूप में समन कर सकता है, या उपस्थित किसी व्यक्ति की, यद्यपि उसे गवाह के रूप में समन नहीं किया गया है, जांच कर सकता है, या किसी ऐसे व्यक्ति को वापस समन कर सकता है और पुनः जांच कर सकता है जिसका पहले ही जांच हो चुकी है; और न्यायालय ऐसे किसी व्यक्ति को समन करेगा और उसकी जांच करेगा, या वापस बुलाएगा और पुनः परीक्षा करेगा यदि उसका साक्ष्य उसे मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए आवश्यक प्रतीत होता है।"

8. दं.प्र.सं. की धारा 311 गवाहों को वापस बुलाने की एक प्रक्रिया है, जिसकी अनुमति न्याय की विफलता को रोकने के लिए दी जा सकती है और हर मामले में बुद्धिरहित तरीके से इसकी अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि विद्वान विचारण न्यायालय के पास दं.प्र.सं. की धारा 311 के तहत गवाहों को बुलाने और किसी भी चरण में साक्ष्य मांगने का अधिकार है, अगर उसे लगता है कि मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए इसकी आवश्यकता है। हालाँकि, इस शक्ति का नियमित तरीके से प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

9. यह सामान्य कानून है कि न्यायालय किसी व्यक्ति को विचारण के किसी भी चरण में समन कर सकता है, यदि ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए आवश्यक है। दं.प्र.सं. की धारा 311 के तहत शक्ति प्रकृति में व्यापक है और इसका प्रयोग विचारण के किसी भी चरण में गवाहों को समन करने या वापस बुलाने के लिए किया जा सकता है, यदि न्यायालय को

लगता है कि न्यायोचित निर्णय पर पहुँचने के लिए ऐसा करना आवश्यक है **[*नताशा सिंह बनाम सी.बी.आई.: (2013) 5 एस.सी.सी. 741*]**

10. माननीय उच्चतम न्यायालय ने ***राजाराम प्रसाद यादव बनाम बिहार राज्य: (2013) 14 एससीसी 461*** के मामले में कई निर्णयों पर चर्चा की और दं.प्र.सं. की धारा 311 के तहत आवेदन पर विचार करते समय विचार किए जाने वाले सिद्धांतों को रेखांकित किया। उसी का प्रासंगिक हिस्सा नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है।

> ***"17.*** *उपरोक्त निर्णयों पर विचार करते हुए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 138 की सहपठित धारा 311 के अंतर्गत आवेदन पर विचार करते समय, हम महसूस करते हैं कि न्यायालयों को निम्नलिखित सिद्धांतों को ध्यान में रखना चाहिए।*
>
> ***17.1.*** *क्या न्यायालय का यह सोचना सही है कि उसे नए साक्ष्य की आवश्यकता है? क्या धारा 311 के अंतर्गत प्रस्तुत किए जाने वाले साक्ष्य को न्यायालय द्वारा मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए उल्लिखित किया गया है?*
>
> ***17.2.*** *दं.प्र.सं. की धारा 311 के अंतर्गत व्यापक विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग यह सुनिश्चित करेगा कि निर्णय अपूर्ण, अनिर्णायक और काल्पनिक तथ्यों के आधार पर न दिया जाए, क्योंकि इससे न्याय का उद्देश्य विफल हो जाएगा।*
>
> ***17.3. यदि किसी गवाह का साक्ष्य न्यायालय को <u>मामले के न्यायोचित निर्णय</u> के लिए आवश्यक प्रतीत होता है, तो***

न्यायालय को ऐसे किसी व्यक्ति को समन करने और उसकी जांच करने अथवा उसे वापस बुलाकर पुनः जांच करने का अधिकार है।

17.4. दं.प्र.सं. की धारा 311 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग केवल सत्य का पता लगाने या ऐसे तथ्यों के लिए उचित सबूत प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए, जिससे मामले का न्यायसंगत और सही निर्णय हो सके।

17.5. *उक्त शक्ति के प्रयोग को अभियोजन मामले में कमी को भरने के रूप में नहीं कहा जा सकता है, जब तक कि मामले के तथ्य और परिस्थितियां यह स्पष्ट न कर दें कि न्यायालय द्वारा शक्ति के प्रयोग से अभियुक्त के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह उत्पन्न होगा, जिसके परिणामस्वरूप न्याय में चूक होगी।*

17.6. *व्यापक विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए, मनमाने ढंग से नहीं।*

17.7. *न्यायालय को स्वयं इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि मामले में न्यायोचित निर्णय पर पहुंचने के लिए ऐसे गवाह की जांच करना या उसे आगे की जांच के लिए वापस बुलाना हर दृष्टि से आवश्यक था।*

17.8. *दं.प्र.सं. की धारा 311 का उद्देश्य न्यायालय पर सत्य का पता लगाने तथा न्यायोचित निर्णय देने का दायित्व भी डालता है।*

17.9. *न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि अतिरिक्त साक्ष्य आवश्यक है, इसलिए नहीं कि इसके बिना निर्णय उद्घोषित करना असंभव होगा, बल्कि इसलिए कि ऐसे साक्ष्य पर विचार किए बिना न्याय विफल हो जाएगा।*

17.10. परिस्थिति की गंभीरता, निष्पक्षता और सही समझ को ध्यान में रखते हुए विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाना चाहिए। न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि विचारण में किसी भी पक्षकार को गलतियों को सुधारने से नहीं रोका जा सकता है और यदि उचित साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किए गए या किसी असावधानी के कारण कोई प्रासंगिक सामग्री अभिलेख पर नहीं लाई गई, तो न्यायालय को ऐसी गलतियों को सुधारने की अनुमति देने में उदारता दिखानी चाहिए।

17.11. <u>न्यायालय को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि आखिरकार विचारण मूल रूप से कैदियों के लिए है और न्यायालय को यथासंभव निष्पक्ष तरीके से उन्हें अवसर प्रदान करना चाहिए। तर्क की उस समानता में, अभियुक्त की कीमत पर संभावित पूर्वाग्रह के विरुद्ध अभियोजन पक्ष की रक्षा करने के बजाय अभियुक्त को अवसर देने के पक्ष में गलती करना सुरक्षित होगा। न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि इस तरह की विवेकाधीन शक्ति का अनुचित या मनमाना प्रयोग अवांछनीय परिणामों को जन्म दे सकता है।***

17.12. *अतिरिक्त साक्ष्य को छिपाने के लिए या किसी भी पक्षकार के विरुद्ध मामले की प्रकृति को बदलने के लिए प्राप्त नहीं किया जाना चाहिए।*

17.13. इस शक्ति का प्रयोग यह ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए कि प्रस्तुत किए जाने वाले साक्ष्य संबंधित मुद्दे से संबंधित होंगे तथा यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि दूसरे पक्षकार को खंडन का अवसर दिया जाए।

17.14. इसलिए, न्यायालय को दं.प्र.सं. की धारा 311 के अंतर्गत शक्ति का उपयोग केवल न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए मजबूत और वैध कारणों से करना चाहिए और इसका प्रयोग सावधानी, सतर्कता और समझदारी के साथ किया जाना चाहिए। न्यायालय को यह ध्यान में रखना चाहिए कि निष्पक्ष विचारण से अभियुक्त, पीड़ित और समाज का हित जुड़ा हुआ है और इसलिए, संबंधित व्यक्तियों को निष्पक्ष और उचित अवसर प्रदान करना संवैधानिक लक्ष्य होने के साथ-साथ मानवाधिकार भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

(जोर दिया गया)

11. याचिकाकर्ता मुख्य रूप से पीड़ित को वापस बुलाने और प्रति-परीक्षा करने के उसके अनुरोध को अस्वीकार करने से व्यथित है, जो इस आधार पर किया गया था कि उसके अधिवक्ता बदल गए थे और विधिक सहायता के माध्यम से नियुक्त पिछले अधिवक्ता द्वारा किया गया प्रति-परीक्षा कथित रूप से अनुचित था।

12. यह उजागर करना महत्वपूर्ण है कि पीड़िता/अभि.सा. 1 का शुरुआती परीक्षण 07.07.2022 को किया गया था और उसके बाद याचिकाकर्ता के विधिक सहायता परामर्शदाता द्वारा उसी समय प्रति-परीक्षा किया गया था। हालांकि, याचिकाकर्ता ने 05.10.2023 को दं.प्र.सं. की धारा 311 के अंतर्गत आवेदन दायर किया, जिसमें पीड़िता को आगे के प्रति-परीक्षा के लिए वापस बुलाने की मांग की गई। यह आवेदन पीड़िता की जांच से लगभग 15 महीने की देरी के

बाद दायर किया गया था। देरी के लिए याचिकाकर्ता का औचित्य इस दावे पर आधारित था कि उसके पिछले अधिवक्ता द्वारा की किया गया प्रति-परीक्षा अपर्याप्त था।

13. इस बात पर ज़ोर दिया जाना चाहिए कि अतिरिक्त प्रति-परीक्षा के लिए पीड़िता को वापस बुलाना हल्के में लिया जाने वाला मामला नहीं है। जब पीड़िता, खास तौर पर बच्चा या कम उम्र के व्यक्ति को वापस बुलाया जाता है, तो उसे घटना से जुड़ी दर्दनाक घटनाओं को फिर से जीने के लिए मजबूर होना पड़ता है। इस तरह बार-बार की गई पूछताछ से भावनात्मक रूप से बहुत ज़्यादा तकलीफ़ हो सकती है और मनोवैज्ञानिक क्षति भी हो सकता है। विधिक प्रणाली का उद्देश्य अभियुक्त के अधिकारों के साथ-साथ कमजोर गवाहों को अनावश्यक पुनः आघात से बचाने की आवश्यकता के बीच संतुलन बनाना है, विशेष रूप से संवेदनशील मामलों में।

14. याचिकाकर्ता द्वारा दायर आवेदन के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि ऐसा कुछ भी नहीं अभिवाक किया गया है जो गवाहों को वापस बुलाने को उचित ठहराए या जो मामले के न्यायोचित निर्णय के लिए आवश्यक हो। अस्पष्ट प्रकथन किए गए हैं कि गवाहों को वापस बुलाना आवश्यक है क्योंकि याचिकाकर्ता कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं की जांच करने में विफल रहा जो मामले के लिए महत्वपूर्ण थे। जांच में छोड़ी गई कथित खामियों को दूर करने के लिए ऐसे

विलंबित आवेदनों को अनुमति देने से विचरण प्रक्रिया की निष्पक्षता और दक्षता कम हो जाएगी, जो न्याय के सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए आदर्श रूप से त्वरित और निर्णायक होनी चाहिए।

15. यह ध्यान रखना प्रासंगिक है कि वर्तमान याचिका आक्षेपित आदेश पारित होने के लगभग 11 महीने बाद दायर की गई है। हालाँकि यह मुक्विल का अधिकार है कि वह अपना अधिवक्ता बदल सकता है, लेकिन इसका इस्तेमाल बचाव में कमियों की भरपाई करने की रणनीति के रूप में नहीं किया जा सकता। इस संदर्भ में याचिकाकर्ता के तर्क को स्वीकार करना विचारण की अंतिमता को कमज़ोर करेगा। अगर इस तरह के तर्क की अनुमति दी जाती है, तो यह एक मिसाल कायम करेगा, जहाँ एक निश्चित समय बीत जाने के बाद, अभियुक्त का प्रतिनिधित्व करने के लिए एक नया अधिवक्ता नियुक्त किया जा सकता है, संभावित रूप से आगे की जाँच के लिए पीड़िता को वापस बुलाने का अनुरोध करके कार्यवाही को फिर से शुरू किया जा सकता है। यह अनिवार्य रूप से अभियुक्त को कथित कमियों को भरने की लगातार कोशिश करने की अनुमति देगा, जिससे विचारण अनिश्चित काल तक लंबा खिंच सकता है।

16. यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, 2018 (**पॉक्सो अधिनियम**) की धारा 35(2) में यह अधिदेश किया गया है कि न्यायालय द्वारा अपराध का संज्ञान लेने की तिथि से एक वर्ष के भीतर विचारण पूरी कर ली जानी चाहिए।

इस प्रावधान का उद्देश्य लंबे समय तक चलने वाले विचारण को रोकना है, और यह सुनिश्चित करना है कि पीड़ित बच्चे को लंबे समय तक दुर्व्यवहार को फिर से जीने के आघात से गुजरना न पड़े। इसके अतिरिक्त, पॉक्सो अधिनियम की धारा 33(5) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि पीड़ित बच्चे को बार-बार न्यायालय में गवाही देने के लिए नहीं बुलाया जाना चाहिए। विधिक ढांचे का स्पष्ट उद्देश्य बाल गवाहों को बार-बार न्यायालय में पेश होने के उत्पीड़न और परेशानी से बचाना है। इसलिए, केवल यह प्रकथन करना कि निष्पक्ष विचारण सुनिश्चित करने के लिए पीड़िता को वापस बुलाना आवश्यक है, केवल इसलिए कि अधिवक्ता बदल गया है, किसी भी ठोस कारण के अभाव में अपर्याप्त है।

17. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय को आक्षेपित आदेश में कोई कमी नहीं दिखती है, और वर्तमान याचिका में कोई भी गुणागुण नहीं होने के कारण खारिज की जाती है। लंबित आवेदन का भी निपटान किया जाता है।

न्या. अमित महाजन,

19 सितंबर, 2024

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*